International Journal of Applied Research 2015; 1(11): 874-877

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2015; 1(11): 874-877
www.allresearchjournal.com
Received: 09-08-2015
Accepted: 10-09-2015

अशोक कुमारी
पी. एच.डी., बौद्ध अध्ययन विभाग
दिल्ली विश्विद्यालय

Correspondence
अशोक कुमारी
पी. एच.डी.ए बौद्ध अध्ययन विभाग
दिल्ली विश्विद्यालय

गौतम बुद्ध के काल की शैक्षिक व्यवस्था ''अतदीपो भव'' गौतम बुद्ध

अशोक कुमारी

शिक्षा का प्रबन्धन

बौद्ध दर्शन नैतिक जीवन का दर्शन है। महात्मा बुद्ध का जीवन दर्शन उनके अनेक प्रवचनों में संकलित है। यद्यपि बुद्ध ने कोई पुस्तक नहीं लिखी, फिर भी उनके उपदेश उनके शिष्यों को याद रहे और उनके निर्वाण के पश्चात् उन्होंने उन्हें लिपिबद्ध करने का प्रयत्न किया। भगवान् बुद्ध ने तत्वमीमांसा के विवेचन में समय नहीं लगाया, क्योंकि उनके अनुसार इससे मनुष्य उन्नति नहीं कर सकता। बुद्ध की धरणा थी कि जिन विषयों के समाधान के लिए पर्याप्त प्रमाण न हो, उसके समाधान का प्रयत्न व्यर्थ है। बुद्ध सत्य को जीवन का सार मान कर चले। उन्होंने अप्रत्यक्ष और शक्ति से युक्त विषयों के बारे में तर्क नहीं किया, क्योंकि उनके अनुसार उनसे मुक्ति के मार्ग में रुकावट आती है।

शिक्षा की अवधारणा

बौद्ध–दर्शन में शिक्षा की कोई निश्चित अवधारणा या परिभाषा नहीं दी गई है। क्योंकि महात्मा बुद्ध जो बौद्ध दर्शन के प्रवर्तक माने जाते हैं, हमेशा दार्शनिक विवादों से दूर रहे थे।
''बौद्ध संसार अपने मठों व पृथक् या स्वतन्त्रता रूप से शिक्षा प्राप्त करने का अवसर नहीं देता था। धर्मिक या लौकिक सब प्रकार की शिक्षा भिक्षुओं के साथ में होती थी।''
अतः निष्कर्ष में कहा जा सकता है कि शिक्षा की परिभाषा बौद्ध दर्शन के अनुसार इस प्रकार है–
''शिक्षा (ज्ञान) ही मोक्ष (निर्वाण) प्राप्ति के साध्नों में सर्वोत्तम है।''
उपरोक्त परिभाषा से स्पष्ट है कि शिक्षा मुक्ति का एक साध्न है दूसरे शब्दों में, शिक्षा वह प्रक्रिया है जो व्यक्ति को सांसारिक दुःखों से मुक्ति दिलाने और उस निर्वाण की प्राप्ति में मदद करे।

शिक्षा के उद्देश्यः

सभी भारतीय दर्शन दुःखवाद से आरम्भ है तथा सभी दर्शनों में शिक्षा के उद्देश्य दुःखों से मुक्ति दिलवाना माना गया है परन्तु बौद्ध दर्शन विशेष रूप से दुःखदायी है। बौद्ध दर्शन के अनुसार संसार दुःखों का घर है और शिक्षा इन दुःखों से छुटकारा पाने के लिए सहायता करती है। बौद्ध दर्शन के आधर चार आर्य सत्य हैं जैसे– जीवन दुःखों से भरा हुआ है, दुःखों का कारण है, दुःखों का अन्त सम्भव है तथा दुःखों के अन्त का उपाय है। बौद्ध दर्शन के अनुसार दुःखों का कारण अज्ञानता है और यदि उस अज्ञानता को दूर कर दिया जाये तो दुःखों का अन्त हो सकता है और यह कार्य केवल शिक्षा ही कर सकती है।भगवान बुद्ध ने अच्छे जीवनयापन के लिए जो अष्टमार्ग बताया है, वास्तव में वही बौद्ध शिक्षा के उद्देश्य माने जा सकते हैं। वे निम्नलिखित हैंः

1 सम्यक–दृष्टि (ठीक देखना)
2. सम्यक–संकल्प (सच्चा संकल्प)
3. सम्यक्–वाक् (सच्चा वचन)
4. सम्यक्–कर्म (ठीक प्रकार से काम करना)
5. सम्यक्–आजीविका (ठीक प्रकार से व्यवसाय करना)
6. सम्यक्–व्यायाम (ठीक प्रकार से व्यवसाय करना)
7. सम्यक्–स्मृति (ठीक विचार रखना)
8. सम्यक्–समाधि (ठीक प्रकार से मन को समन्वित करना)

कालान्तर में बौद्ध शिक्षा–प्रणाली में कुछ व्यावहारिक उद्देश्यों को स्थान मिला अर्थात् बौद्धों ने उस देश में बड़े–बड़े शिक्षा संस्थानों का संचालन कर बौद्ध–शिक्षा का साकार रूप भी हमारे सामने रखा। ये उद्देश्य आज भी शिक्षा के संगत उद्देश्य कहे जाते हैं जो निम्निलिखित हैं।

1. **नैतिक जीवन का विकास**
2. **व्यक्तित्व का विकास**
3. **संस्कृति का संरक्षण**
4. **सर्वांगीण विकास**

बौद्ध दर्शन में पाठ्यक्रम

बौद्ध दर्शन के अनुसार यह जगत् परिवर्तनशील है। मनुष्य भी परिवर्तन है तथा संसार में कुछ भी स्थायी नहीं है। यहां तक कि आत्मा भी स्थायी नहीं है। वह भी क्षण क्षण परिवर्तनशील है। बौद्ध र्ध्म का मूल आग्रह दुःखवाद तथा दुःख से मुक्त होने का उपाय तक सीमित रहा। यदि केवल इन विचारों तक पाठ्यक्रम को सीमित किया जाए तो बौद्ध–शिक्षा–दर्शन का पाठ्यक्रम इस प्रकार का होगाः

1. चार आर्य सत्यों का पूर्ण परिपाक
2. सम्यक् रूप से आजीविका उपार्जन करने की कला।
3. बौद्ध साहित्य का अध्ययन।
4. भगवान बुद्ध तथा अन्य विद्वानों के जीवन चरित्रा का अध्ययन

भगवान बुद्ध तथा अन्य विद्वानों के जीवन–चरित्रा का अध्ययन बाद में बौद्ध शिक्षा–प्रणाली में बौद्ध पाठ्यक्रम का विस्तार दिखाई देता है। बौद्ध–विहार तथा मठों में 5 प्रकार की विद्याओं का अध्यापन किया जाता था–

1 शब्द विद्या – इसके अन्तर्गत शब्द निर्माण, व्युत्पत्ति तथा व्याकरण ज्ञान का समावेश होता था।

2. शिल्पासन–विद्या – इसके अन्तर्गत विभिन्न प्रकार के उद्योग तथा कलाएं आती हैं।

3. चिकित्सा विद्या – इसके अन्तर्गत औषध विज्ञान, शरीर विज्ञान आदि का समावेश किया जाता है।

4. हेतु विद्या – इसके अन्तर्गत तर्कशास्त्रा का अध्ययन आता है।

5. अध्यात्म विद्या – इसके अन्तर्गत बौद्ध दर्शन तथा अन्य दर्शनों का तुलनात्मक अध्ययन आता है।

अध्यापक की व्याख्या के बाद समूह में उस विषय की चर्चा होती थी और छात्र परस्पर चर्चा के बाद अपनी बची शंकाओं को अध्यापक के समक्ष रखते थे। इस प्रकार से सामूहिक अध्ययन–अध्यापन विधि के अलावा कुछ वैयक्तिक अध्ययन विधियों का भी प्रयोग किया जाता था जो इस प्रकार है–

क. सूत्रों को कंठस्थ करना
ख. तथ्यों का स्मरण करना व उनका संचय करना
ग. पठित सामग्री को पुनः मनन करना
घ. आत्मसात् की गई सामग्री को दृढ़ता के साथ धारण करना।

शिक्षक की संकल्पनाः

बौद्ध दर्शन में शिक्षक का स्थान महत्वपूर्ण है। बौद्ध दर्शन के अनुसार वह व्यक्ति शिक्षक बन सकता है जिसके चार आर्यो सत्यों को समझ लिया है तथा जो स्वयं अष्टांग मार्ग के अनुरूप अपना जीवन व्यतीत करता है।

आचार्य विभिन्न श्रेणियां

बौद्ध दर्शन में गुरु की दो श्रेणियां बताई गई हैं–

1. **उपाध्याय –** छात्रें की भिन्नताओं को ध्यान में रखकर अध्यापन का कार्य करता है और विभिन्न विधियों के अध्यापन के लक्ष्य की पूर्ति करता है। छात्रों में सम्यक् दृष्टि का विकास करता है।

2. **आचार्य –** छात्रों के सम्यक् संकल्प, सम्यक् वाक, सम्यक् व्यायाम, एवं सम्यक् स्मृति द्वारा छात्रों को सम्यक् समाधि की ओर प्रवृत्त करता है। आचार्य छात्रों के नैतिक जीवन को उच्च से उच्चतर की ओर ले जाता है जबकि उपाध्याय उसे आजीविका इत्यादि का प्रशिक्षण भी देता है। सांसारिक जीवन को सुखी बनाने हेतू भी शिक्षण करता है, किन्तु सभी का अन्तिम लक्ष्य छात्र को दुःख से मुक्ति दिलवाना है। इस प्रकार से बौद्ध शिक्षा दर्शन में शिक्षक का प्रमुख स्थान है।

बौद्ध शिक्षा के व्यावहारिक स्वरूप में बौद्ध–शिक्षा संस्थाओं में आज की तरह एक आचार्य होता था, उस आचार्य के अधीन अनेक उपाध्याय आते हैं जो अपने अपने विषय के विशेषज्ञ होते थे। प्रत्येक उपाध्याय के पास छात्रों का एक छोटा सा समूह होता था। इस छोटे समूह में अध्ययन–अध्यापन प्रक्रिया चलती थी।

छात्र की संकल्पना

1. छात्रों का प्रवेश

बौद्ध दर्शन में गुरुकुल परम्परा नहीं थी। विद्यार्थी मठों, संघों, विहारों में रहकर शिक्षा प्राप्त करते थे। जहां दूर दूर से शिक्षार्थी शिक्षा ग्रहण करने आते थे। वैदिक काल में जिस प्रकार प्रवेश के पूर्व उपनयन संस्कार आदि सम्पन्न होता था, उसी प्रकार बौद्धकालीन शिक्षा संस्थान में प्रविष्ट होने के लिए भी छात्रों को पव्वज्जा तथा उपसम्पदा संस्कारों को सम्पन्न करना पड़ता था।

2. पव्वज्जा या प्रवज्या

परिवार से अलग रहकर 8 वर्ष की आयु में छात्र को संघ में प्रवेश करना पड़ता था। संघ में आकर बालक को सन्यासी की तरह जीवनयापन करना पड़ता था। उसे सिर मुंडाकर गेरुआ वस्त्र धरण करना पड़ता था। भिक्षु से अपनी शरण में लेने की प्रार्थना करता था और भिक्षु उससे 3 बार 'बुद्धं शरणं गच्छामि', 'र्धमं शरणं गच्छामि', 'संघ शरणं गच्छामि' का उच्चारण कराकर भिक्षु बना लेता था। इसके साथ ही उसे भोग विलास के जीवन को त्यागने की प्रतिज्ञा लेनी पड़ती थी। संघ में रहते हुए उसे हर बातों की प्रतिज्ञा लेकर उनका कठोरतापूर्वक पालन करना पड़ता था। वे इस नियम **पदानि** कहलाते थे। जिस बालक की प्रव्वज्जा हो जाती थी, उसे **'सामनेर'** कहा जाता था।

3. उपसम्पदा

20 वर्ष की आयु तक संघ में नियमानुसार शिक्षा प्राप्त कर लेने के बाद उपसम्पदा संस्कार सम्पन्न किया जाता था। इस संस्कार में संघ के सभी सन्यासी एकत्रित होते थे तथा सामने वाले को इन्हें अपनी योग्यता एवं कर्त्तव्यों के माध्यम से संतुष्ट करना पड़ता था। इस संस्कार के सम्पन्न हो जाने के बाद वह संघ का विधिवत् सदस्य माना जाता था।

गुरू–शिष्य संबंध

बौद्ध कालीन संघों में गुरु–शिष्य के संबंध पिता एवं पुत्रवत होते थे। गुरु शिष्य के साथ मधुर व्यवहार करता था। उसकी दिनचर्या निर्धारित करता था। शिष्य भी तन–मन से गुरू की सेवा करता था।

गुरु के कर्त्तव्य

1. आचार्य शिष्य को पुत्र की भांति समझता था।
2. शिष्य का अभाव होने पर पात्र तथा खीर की व्यवस्था करता था।
3 शिष्य के बीमार हो जाने पर शिष्य की सेवा करना तथा अच्छे से अच्छ चिकित्सक से इलाज करवाना।
4. शिष्य को उच्च कोटि की मानसिक तथा आध्यात्मिक शिक्षा प्रदान करना।
5. विद्यार्थियों की तुलना में केवल तीन गुणा ही खर्च करना।

छात्रों के कर्त्तव्य

जिस प्रकार गुरु के विद्यार्थी प्रति कर्त्तव्य तथा उत्तरदायित्वों को निभाता था, उसी प्रकार विद्यार्थी को भी गुरु के प्रति कर्त्तव्य निभाना पड़ते थे। छात्र के कर्त्तव्य इस प्रकार थे–

1. उपाध्याय से पूर्व उठना।
2. उपाध्याय के बाद सोना।

3. प्रातः काल गुरु के लिए दातुन, जल तथा मिट्टी की व्यवस्था करना।
4. गुरु के बैठने के लिए आसन लगाना।
5. गुरु के लिए खीर की व्यवस्था करना।

बौद्ध दर्शन में अनुशासन

बौद्ध दर्शन नैतिक अनुशासन का दर्शन है। भगवान् बुद्ध ने तत्व मीमांसा के विवेचन में समय लगाना अनुपयोगी समझा, क्योंकि इससे मनुष्य के जीवन की उन्नति में सहायता नहीं मिलती। बुद्ध का मानना था कि जिन विषयों के समाधन के लिए पर्याप्त प्रमाण न हों, उनके समाधन की चेष्टा व्यर्थ है। बुद्ध ने पूर्व–प्रचलित अनेक दार्शनिक मतों को युक्तिहीन और निराधर प्रतिपादित किया। उन्होंने अप्रत्यक्ष और संदिग्ध विषयों के बारे में तर्क का परहेज किया, क्योंकि उससे मुक्ति का मार्ग प्रशस्त नहीं होता।

विहारों की स्थापना

वैदिक शिक्षा की भांति बौद्ध दर्शन काल में भी शिक्षा के अनेक केन्द्रों की स्थापना हो गई। इन केन्द्रों को विहारों के नाम से जाना जाता था। इनमें शिक्षा प्रदान करते समय यह ध्यान रखा जाता था कि ध्म्म प्रचार के साथ संकीर्णता को बल न मिले। इन विहारों में शिक्षा सभी जाति, वर्ग, लिंग, धर्म आदि के छात्रों को समान रूप से दी जाती थी।

बुद्ध काल में राजगगृह, वैशाली श्रावस्ती तथा कपिलवस्तु आदि वर्गों में कई प्रसिद्ध विहारों का निर्माण हुआ था जो कि बौद्ध शिक्षा के प्रमुख केन्द्र बन गये। राजगृह में वेणुवन, येष्टिवन तथा गीतावन, वैशाली में कूटागारशाला तथा पूर्वाराम इस युग के प्रसिद्ध विहार थे। इनके अतिरिक्त अनेक विहारों का निर्माण हुआ। इन्हें संघाराम कहा जाता था। इन संघारामों में आध्यात्मिक चिंतन होता था। यहां के आचार्य अपने शिष्यों को अध्यात्मिक–ज्ञान के सागर में अवगत कराते थे। बुद्ध के समय के बौद्ध विहारों के भिक्षुओं को सारिपुत्त, महामोग्गलान, महाकच्चान, महाकोट्ठित, महाकष्मिन, महाचुन्द अनुरुद्ध, रेवत, उपालि, आनन्द तथा राहुल आदि प्रमुख भेदों के प्रवचनों को श्रवण करने तथा उनसे वार्तालाप कर अपने को कृतार्थ करने का मौका मिलता रहता था। ये लोग प्रायः भ्रमणशील रहा करते थे और जिस विहार में कुछ समय व्यतीत करने के लिए रुक जाते, वहां के भिक्षुओं को इनसे जटिल विषयों पर विचार विमर्श कर शंका का समाधन का सुअवसर अनायास मिल जाता था। उस समय नालन्दा तथा वल्लभी आदि महाविहारों को विद्या केन्द्रों के रूप में प्रसिद्ध थे। इनमें सभी विषयों का अध्यापन किया जाता था।

बौद्ध शिक्षा केन्द्रों का प्रबन्ध

महात्मा बुद्ध के बाद बौद्ध विहार और मठ बौद्ध शिक्षा के केन्द्रों के रूप में विकसित होने लगे। बौद्ध शिक्षण संस्था की सम्पूर्ण व्यवस्था बौद्ध भिक्षुओं के हाथ में रहती थी। आचार्य के प्रबन्ध में सहायता प्रदान करने के लिए कई समितियां होती थी। जिनमें शिक्षा समिति और प्रबन्ध समति प्रधन थी। इनकी आर्थिक स्थिति दान पर निर्भर करती थी।

प्रमुख बौद्ध–शिक्षा केन्द्र

1. नालन्दा विश्वविद्यालयः सातवीं शताब्दी में नालन्दा का विहार समस्त एशिया में प्रसिद्ध बौद्ध शिक्षा का केन्द्र था।

500 श्रेणियों में मिलकर 10 करोड़ मुद्राओं में नालन्दा क्षेत्रा को खरीद करके महात्मा बुद्ध को अर्पित किया था। इस विश्वविद्यालय के खर्चे के लिए 200 गांव दान में प्राप्त थे, जिसकी आय से यहां के भिक्षुओं का पोषण होता था। इस गांव के निवासी प्रतिदिन यहां कई मण चावल व दूध भेजा करते थे। छात्रों से किसी प्रकार का शुल्क नहीं लिया जाता था। उनके आवास और भोजन की व्यवस्था निःशुल्क की जाती थी।

नालन्दा में प्रवेश बड़ी कठिनाई से मिलता था। प्रवेश द्वार पर विद्वान् रहते थे जो छात्रों की मौखिक परीक्षा लेते थे। उसमें उत्तीर्ण होने पर ही प्रवेश मिलता था। लगभग 30 प्रतिशत छात्र ही सफ्रफल होते थे। स्त्रियों को भी शिक्षार्थी बनाने की अनुमति थी। नालन्दा में विशेषकर महायान शाखा का अध्ययन किया जाता था। 'पालि' भाषा की शिक्षा अनिवार्य रूप से प्रदान की जाती थी, नागार्जुन, वसुबंधु, असंग, धर्मकीर्ति आदि ऐसे ही महायशस्वी विचारक थे जिन्होंने इसी शिक्षा केन्द्र से अपने को उन्नत किया था। चीनी यात्राी ह्वेन्सांग ने अनेक आचार्यों का उल्लेख किया है जो अपने–अपने विषय के प्रकाण्ड विद्वान थे तथा भारत के विभिन्न प्रदेशों से आकर यहां अध्ययन–अध्यापन करते थे। धर्मपाल, चन्द्रपाल, प्रभामित्रा, आर्यदेव आदि ऐसे ही प्रतिभावान शासक हुए हैं जिन्होंने यहां अपना बहुत नाम कमाया।

2. विक्रमशिला विश्वविद्यालय

इस विश्वविद्यालय की स्थापना आठवीं सदी में बंगाल के पालवंशीय शासक धर्मपाल ने बिहार प्रदेश में स्थित भागलपुर से 25 मील दूर की थी। 8वीं से 12वीं सदी तक यह भारत का प्रसिद्ध केन्द्र रहा। यहां अनेक विद्वानों ने विभिन्न ग्रन्थों की रचना की जिनका बौद्ध साहित्य में नाम है जिनमें बुद्ध, स्लाकारशान्ति, दीपंकर आदि प्रमुख हैं। दीपंकर ने सैंकड़ों ग्रन्थों की रचना की थी और वह इस विश्वविद्यालय का सबसे प्रतिभाशाली विद्वान था। उसे शीलरक्षित और चन्द्रकीर्ति जैसे बौद्ध आचार्यों ने शिक्षा दी थी।

यहां बौद्धधर्म और दर्शन के अतिरिक्त न्याय, तत्वज्ञान, व्याकरण आदि की शिक्षा दी जाती थी। छात्रों की सुविध के लिए पुस्तकें भी उपलब्ध की जाती थी तथा उनकी जिज्ञासाओं का समाधान आचार्य द्वारा किया जाता था। विदेशों से भी छात्र शिक्षार्थ आया करते थे। शिक्षा प्राप्ति के बाद जो उपाधि प्राप्त होती थी उसके विषय में छात्र की दक्षता मानी जाती थी। यहां अध्यापकों की भी काफी संख्या थी जो विहारों और आवासों में रहते थे।

3. वल्लभी विश्वविद्यालय

गुजरात काठियावाड़ समुद्र के पास वल्लभी शिक्षा केन्द्र था जो नालन्दा के साथ ही विकसित हुआ था। अभी तक इस विश्वविद्यालय की प्रसिद्ध सारे देश में फैल गई थी। वहां अनेक बौद्ध विद्वान बने थे। 100 विद्वान और 8000 भिक्षुओं का विवरण हवेन्सांग ने भी दिया है।

4. श्रावस्ती नगर का शिक्षा केन्द्र

महात्मा बुद्ध के जीवनकाल में ही श्रावस्ती नगर बौद्ध धर्म और शिक्षा का केन्द्र बन चुका था। प्रमुख श्रेष्ठ आचार्य जिन्होंने बुद्ध के समय में इस विहार का निर्माण करवाया था। यहां पर बौद्धधर्म ओर आचार की शिक्षा दी जाती थी।

5. जगद्दल विश्वविद्यालय

बंगाल के बौद्ध पाल राजा बड़े विद्या–प्रेमी थे। राजा रामपाल (1054–1130 ई.) ने एक नई राजधानी गंगा और उसकी एक सहायक नदी करतोया के संगम पर बनाई। उसका नाम रामावती रखा गया। यहां बौद्ध पाल राजा ने जगद्दल नामक बौद्ध विश्वविद्यालय स्थापित किया। वह मुश्किल से डेढ सदी रहा होगा। तत्पश्चात् बिहार के मुस्लिम आक्रमण में यह भी नष्ट हो गया। परन्तु इस थोड़े से समय में इस विश्वविद्यालय में बहुत से विद्वान हुए, जिनके नाम आज हमें केवल ग्रन्थों के तिथि लेखकोल्लेख मात्र से ही पता चलते हैं। ये उल्लेख केवल संस्कृत और तिब्बती दो ही भाषाओं में विद्यमान हैं।

6. ओदन्तपुरी विश्वविद्यालय

इसकी स्थापना महाराजा गोपाल (पालवंशी) से बिहार में 12वीं शती में की। इसमें सहस्त्रों छात्र एवं आचार्य थे। इसका विनाश

मुसलमान आक्रमणकारी मुहम्मद बिन ने किया। यह कहा जाता है कि तिब्बत में जो पहला बौद्ध विद्यालय बना, वह इसी विश्वविद्यालय के आदर्श पर था।

नालन्दा की परम्परा इनमें विश्वविद्यालयों ने आगे चलाई, जो कि मुस्लिम विजयकाल तक बनी रही। बाद में इन विश्वविद्यालय से भाग कर कई विद्वान तिब्बत पहुंचे जहां पर उन्होंने अपने ग्रन्थ लिखे।